Postal Regn. - RTK/010/2017-19
RNI - HRHIN/2003/10425

ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र

अगस्त 2020 (प्रथम)

Email : aryapsharyana@yahoo.in

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

Visit us : www.apsharyana.org

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,120
विक्रम संवत् 2076
दयानन्दाब्द 196

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 16 अंक 13

सम्पादक :
उमेद शर्मा

पत्रिका-शुल्क

देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये

विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सम्पादक-मण्डल

1. आचार्य सोमदेव
2. डॉ० जगदेव विद्यालंकार
3. श्री चन्द्रभान सैनी

सम्पादकीय विभाग

सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष :-
मो० 89013 87993

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

अगस्त, 2020 (द्वितीय)
1 से 15 अगस्त, 2020 तक

इस अंक में....

1. जिज्ञासा-विमर्श (कर्मकाण्ड) 2
2. विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी 4
3. धार्मिक कर्मकाण्ड और आर्यसमाज 6
4. स्वास्थ्य-चर्चा—सेहतमंद रहने के मंत्र 7
5. मनुष्य अपने भाग्य का विधाता स्वयं है 8
6. शिष्य गुरु की आज्ञा में रहें 9
7. धैर्य 11
8. योगी हो तो श्रीकृष्ण जैसा 12
9. नैतिकता का उदय 13
10. कविता—राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब 13
11. स्वाध्याय एवं यज्ञ से जीवन की उन्नति व सुखों की प्राप्ति होती है 14
12. समाचार-प्रभाग 16

आर्य प्रतिनिधि पाक्षिक पत्रिका के प्रसार में सहयोग दें

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक उलट-पलटकर रख देने लायक नहीं, बल्कि गंभीरतापूर्वक पढ़ने योग्य पत्रिका है। यदि आप इसके पाठक बनेंगे तो हमें विश्वास है कि पसन्द भी करेंगे और चाहेंगे कि इसे अन्य लोग भी पढ़ें। कृपया अपने जैसे गम्भीर पाठकों से 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका की चर्चा करें, उन्हें इसका ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करके ऋषि ऋण से अनृण होवें।

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक का वार्षिक शुल्क 200/- रुपये एवं आजीवन शुल्क 2000/- रुपये है।

आप उपरोक्त राशि 'आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा' दयानन्दमठ रोहतक के नाम से बैंक ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भिजवाकर सदस्य बन सकते हैं।

—सम्पादक

जिज्ञासा-विमर्श (कर्मकाण्ड)

❑ आचार्य सोमदेव, मलारना चौड़, सवाई माधोपुर (राजस्थान)

गतांक से आगे...

आपको बता दें कि इस यज्ञ प्रक्रिया को ऋषि दयानन्द जितना सरल बना सकते थे, उतना सरल बनाकर गये हैं।

इस सरलतम विधि से यज्ञ करते हैं तो अति व्यस्त व्यक्ति भी नित्य-प्रति यज्ञार्थ 15-20 मिनट निकाल सकता है। महर्षि दयानन्द ने यज्ञ पूर्ण आहुति के बाद कुछ करने को नहीं लिखा है। हाँ, संस्कार विशेष में 'वामदेव' गान की तो बात महर्षि कहते हैं। फिर भी जिसके पास समय है, वह ये यज्ञ प्रार्थना आदि कर सकता है, इसके करने से कोई विशेष पुण्य मिलेगा अथवा न करने से पाप हो जायेगा-ऐसी बात प्रतीत नहीं होती।

अब आपकी बात पर आते हैं-आपने जो 'सर्वे भवन्तु सुखिनः०' विषय में पूछा है कि यह मन्त्र है या श्लोक? तो हम आपको बता दें कि यह किसी वेद का मन्त्र नहीं है। यह तो पुराण का श्लोक है। गरुड़ पुराण में श्लोक कुछ पाठभेद से दिया गया है। पुराण में यह श्लोक इस रूप में है—

सर्वेषां मंगलं भूयात् सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भागभवेत्॥

(ग.पु.अ. 35.51)

पुराण में '**सर्वे भवन्तु सुखिनः**' के स्थान पर '**सर्वेषां मंगलं भूयात्**' है। आपकी जिज्ञासा इस श्लोक के कवितांश पर है। आप 'कोई न हो दुःखारी' का अर्थ 'कोई न हो दुःख का शत्रु' ऐसा निकाल रहे हैं, अर्थात् इस अर्थ के अनुसार सभी दुःखी होवें, ऐसा अभिप्राय आयेगा। इस प्रकार का अर्थ करने में आपका हेतु है 'पुजारी' शब्द। इस पुजारी शब्द का अर्थ आप पूजा का शत्रु कर रहे हैं और इसमें महर्षि दयानन्द का साक्ष्य भी दे रहे हैं। हम आपको बता दें 'पुजारी' शब्द का अर्थ तो 'पूजा करने वाला' ही है। इसी अर्थ को 'पुजारी' शब्द लिए हैं, कहा जा रहा है। महर्षि ने जो अर्थ 'पूजा का शत्रु' किया है, वह आजकल के पूजा करने वालों पर विनोद में (मजाक में) व्यंग्य किया है। मात्र वहाँ महर्षि विनोद में यह अर्थ कर रहे हैं, न कि यथार्थ में। यदि महर्षि से कोई यथार्थ में इसका अर्थ पूछता तो महर्षि 'पूजा करने वाला' इस अर्थ को ही कहते बताते, क्योंकि इस शब्द का अर्थ ही यह है।

आपने अपनी बात को सिद्ध करने के लिए 'मुरारि' शब्द दिया है, यह पहली बार आपने ठीक लिखा, किन्तु इससे आपकी बात सिद्ध न हुई तो इसको बिगाड़कर 'मुरारी' लिख दिया, जो कि अयुक्त है। कहीं भी किसी भी कोश में आपको 'मुरारि' (मुर नामक दैत्य को मारने वाला=कृष्ण) के स्थान पर 'मुरारी' नहीं मिलेगा, इसलिए जिस बात को आप सिद्ध करना चाहते हैं, वह सिद्ध न होगी। आपने यह भी प्रतिबन्ध लगा दिया कि मात्रा का भेद न करें। आप भाषा विज्ञान, शब्द विज्ञान को जानेंगे-समझेंगे तो ऐसा भ्रम नहीं होगा। जो शब्द जैसा है, वह अपने उस स्वरूप के अनुसार, प्रकरण और प्रसंग अनुसार अर्थ देता है। ऐसा ही यहाँ भी समझें।

जिज्ञासा-9 यजुर्वेद के '**सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः**' मन्त्रांश को बदलकर कुछ पुरोहित आशीर्वाद रूप में '**सत्याः सन्तु यजमानायोः**' अथवा '**यजमानानाम्**' बोलते हैं। मन्त्रों में परिवर्तन का अधिकार उन्हें है या नहीं?

-इन्द्रजित्देव, चूना भट्ठिया, सिटी सैंटर के निकट, यमुनानगर-135001

समाधान-दूसरा प्रश्न आपका '**सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः**' (य० 12.44)। इस मन्त्रांश के 'यजमानस्य' पद पर है। इस मन्त्र के 'यजमानस्य' पद में जाति (समूह को शास्त्रीय भाषा में जाति कहते हैं) में एक वचन समझना चाहिए, जिससे एक वा अनेक यजमानों के लिए यह वाक्य ठीक बैठ जाता है। पुनरपि यदि कोई इस पद को 'व्यक्ति' (एक इकाई) रूप में बोलना चाहे और 'जाति' में एकत्व का ज्ञान न हो, तो 'यजमानयोः' या 'यजमानानाम्' का प्रयोग भी कर सकता है। इसका समाधान व्याकरण महाभाष्य के प्रथम आह्निक में दिया है-

न सर्वैर्लिङ्गैर्न च सर्वाभिर्विभक्तिभिर्वेदे मन्त्रा निगदिताः।
ते चावश्यं यज्ञगतेन पुरुषेण यथायथं विपरिणमयितव्याः।
तान् नावैयाकरणः शक्नोति यथाऽर्थं विपरिणमयितुम्॥

अर्थात्-वेद में मन्त्र सब लिङ्गों और सब विभक्तियों से युक्त नहीं पढ़े हैं। उन्हें यज्ञगत पुरुष के द्वारा यथावत् (तत्तत् यज्ञ के अनुरूप) विपरिणमित करना (बदलना) होगा। उनको अवैयाकरण नहीं बदल सकता। ऐसा करना मूल मन्त्र के संहितापाठ में परिवर्तन नहीं, अपितु विनियोग में सुविधानुसार परिवर्तन होगा।

व्याकरण व शास्त्र

जिज्ञासा-1 सत्यार्थप्रकाश आदि में-'इदि परमैश्वर्ये, ऋ गतिप्रापणयोः, पा रक्षणे' आदि लिखा गया है। इनका निर्धारण कौन और कैसे, किस आधार पर करता है कि 'पा' का अर्थ 'रक्षण करना' होता है? 'पा' का सम्बन्ध रक्षण के साथ, 'इदि' का सम्बन्ध ऐश्वर्य के साथ, 'ऋ' का सम्बन्ध गति के साथ, इत्यादि कौन सुनिश्चित करता है और किन नियमों से? कृपया, यह समझाने का कष्ट कर अनुगृहीत करें। **—भावेश मेरजा, गुजरात**

समाधान-भावेश जी ने दो प्रश्न पूछे हैं—

1. 'पा-आदि' धातुओं के 'रक्षणादि' अर्थों का निर्णय कौन करता है?

2. किन नियमों के आधार पर धातुओं के अर्थों का निर्णय किया जाता है?

1. प्रथम प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है—भारतीय इतिहास में सब विद्याओं को वेद से निकालकर, उनका प्रवचन करने वाला आदि प्रवक्ता ब्रह्मा माना जाता है। **''जिस परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि चारों ऋषियों के द्वारा चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराये और उस ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा से ऋग्, यजुः, साम और अथर्ववेद का ग्रहण किया।''** (स०प्र० समु० 7)। **''पूर्वोक्त अग्नि, वायु, रवि और अङ्गिरा से ब्रह्मा जी ने वेदों को पढ़ा था।''** (ऋ०भा०भू०, वेदोत्पत्ति-विषय)। ऋक्तन्त्रकार ने लिखा है-**''ब्रह्मा बृहस्पतये प्रोवाच, बृहस्पतिरिन्द्राय, इन्द्रो भरद्वाजाय, भरद्वाज ऋषिभ्यः, ऋषयो ब्राह्मणेभ्यः''**। अर्थात् ब्रह्मा ने बृहस्पति को उपदेश किया, बृहस्पति ने इन्द्र को, इन्द्र ने भारद्वाज को, भारद्वाज ने अन्य ऋषियों को, ऋषियों ने ब्राह्मण को.... इस प्रकार विद्या की परम्परा चली। पातञ्जल महाभाष्य के **''बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं वर्षसहस्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपारायणं प्रोवाच''**-से स्पष्ट है कि बृहस्पति ने इन्द्र को एक-एक शब्द का अर्थ सहित उपदेश किया था। इन्द्र के अध्ययन काल तक प्रकृति (धातु/प्रातिपदिक) प्रत्यय का विभागीकरण नहीं हुआ था। तैत्तिरीय संहिता (6/4/7) में लिखा है-''वाग्वै पराच्यव्याकृतावदत्। ते देवा इन्द्रमब्रुवन्, इमां नो वाचं व्याकुर्विति.... तामिन्द्रो मध्यतोऽवक्रम्य व्याकरोत्।'' अर्थात् वाणी पुराकाल में अव्याकृत (=प्रकृति-प्रत्ययादि संस्कार से रहित) थी। दैवों ने इन्द्र से कहा कि इस वाणी को व्याकृत (=प्रकृति-प्रत्ययादि संस्कार से युक्त) करो। इन्द्र ने उस वाणी को मध्य से तोड़कर व्याकृत किया, अर्थात् =प्रकृति-प्रत्यय का निर्धारण किया। इससे स्पष्ट है कि 'पा-आदि' प्रकृति (धातुओं) के 'रक्षणादि' अर्थों का निर्धारण सर्वप्रथम इन्द्र ने किया। इन्द्र से लेकर पाणिनि पर्यन्त कई आचार्य व्याकरण के प्रवक्ता हो गये हैं, जिन्होंने समय-समय पर व्याकरण का प्रवचन किया। महामहोपाध्याय पं० युधिष्ठिर जी को पाणिनि से पूर्वकालीन लगभग 85 व्याकरण प्रवक्ता आचार्यों के नाम ज्ञात थे।

2. दूसरे प्रश्न का उत्तर-**''कथं पुनर्ज्ञायते-अयं प्रकृत्यर्थाः, अयं प्रत्ययार्थः'' इति? सिद्धन्त्वन्वयव्यतिरेकाभ्याम्।** (महाभाष्य 1/3/1)। यह कैसे जाना जाता है कि यह प्रकृति का अर्थ है और यह प्रलय का अर्थ है? अन्वय-व्यतिरेक नियम से यह ज्ञात होता है। महाभाष्य के इस उद्धरण से स्पष्ट है कि अन्वय-व्यतिरेक नियम के द्वारा 'पा-आदि' धातुओं के 'रक्षणादि' अर्थों का निर्धारण किया गया है। अन्वय-व्यतिरेक अर्थात् जिसके होने पर जो हो और जिसके न होने पर जो न हो, वह उससे सम्बन्धित होता है। जैसे—

पचति (पच्+अति) = पकाता है (पकाना, एकत्व, कर्तृत्व, प्र.पु.);

पचन्ति (पच्+अन्ति) = पकाते हैं (पकाना, बहुत्व, कर्तृत्व, प्र.पु.);

पठति (पठ्+अति) = पढ़ता है (पढ़ना, एकत्व, कर्तृत्व, प्र.पु.);

पठन्ति (पठ्+अन्ति) = पढ़ते हैं (पढ़ना, बहुत्व, कर्तृत्व, प्र.पु.);

पच्यते (पच्+यते) = पक रहा है (पकाना, एकत्व, कर्मत्व, प्र.पु.)। **क्रमशः अगले अंक में....**

विदुर-नीति प्रश्नोत्तरी

❑ कन्हैयालाल आर्य, उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

गतांक से आगे....

(2) जो दु:खों को सहन कर लेता है।

(3) जो सदा धर्म में स्थित रहता है।

(4) जिसे सांसारिक विषय अपनी ओर आकृष्ट नहीं करते।

(5) जो व्यक्ति शास्त्रज्ञान सम्पन्न होने पर भी अभिमान नहीं करता, उद्दण्डता नहीं दिखाता।

(6) जो दरिद्र होने पर भी बड़ी-बड़ी अभिलाषाएँ और मनोरथों को नहीं पालता।

(7) जो बिना कर्म किए अथवा अनुचित कार्यों से ऐश्वर्य प्राप्त नहीं करना चाहता।

(8) जो मनुष्य यज्ञ, दान, तपादि उत्तम कर्मों का आचरण करता है।

(9) जो चोरी, हिंसा, मद्य, मांस भक्षण आदि दुष्ट एवं निन्दित कर्मों का सेवन नहीं करता।

(10) जो आस्तिक (ईश्वर, आत्मा, वेद और पुनर्जन्म में विश्वास रखने वाला) हैं।

(11) जो श्रद्धावान् है।

(12) जो मनुष्य अपने ऐश्वर्य को छोड़कर दूसरे के ऐश्वर्य को प्राप्त करने की चेष्टा नहीं करता।

(13) जो अपने मित्र के साथ मिथ्या व्यवहार नहीं करता है।

(14) जो मनुष्य क्रोध और प्रसन्नता, अभिमान और लज्जा, धृष्टता तथा मनमानी करने की प्रवृत्ति के दोष से पुरुषार्थ रूपी जीवनोद्देश्य को नहीं छोड़ता है।

(15) जिस व्यक्ति के (भावी) भविष्य में करने योग्य कार्यक्रम, विचार (गुप्तरूप से मन्त्रणा किए हुए) और निश्चय को शत्रु लोग नहीं जान सकते हैं। (यह उपदेश क्योंकि राजा को दिया जा रहा है, इसलिए प्रसंग अनुकूल उचित है)।

(16) जो पुरुष अपने को न चाहने वालों को नहीं चाहता है और चाहने वालों को चाहता है। (इसमें मित्र और शत्रु का भाव निहित है)।

(17) जो बलवान् से द्वेष करने की अपेक्षा स्वयं को प्रत्येक दृष्टि से बलवान् बनाता है।

(18) जो व्यक्ति मित्र बनने के अयोग्य अर्थात् शत्रु को अपना मित्र नहीं बनाता और मित्र को बनने योग्य (अर्थात् हितकारी) व्यक्ति से द्वेष नहीं करता और उसका अहित भी नहीं करता और न ही मित्र के प्रति दुष्ट कर्म करता है।

(19) जिस व्यक्ति के भावी कार्य में गर्मी-सर्दी, भय-प्रीति, सम्पन्नता-विपन्नता बाधा नहीं पहुँचा सकते अर्थात् जो इन परिस्थितियों में घबराता नहीं है।

(20) जो अपने कार्यों को अस्त-व्यस्त करने के स्थान पर (अर्थात् केवल भृत्यों पर निर्भर न रहकर) सभी कार्यों को स्वयं करने की योग्यता रखता है।

(21) जो सबके प्रति सन्देह नहीं करता।

(22) जो शीघ्र करने योग्य कार्यों में विलम्ब नहीं करता।

(23) जिस व्यक्ति की बुद्धि धर्म और अर्थ के अनुकूल चलती है।

(24) जो विषय वासना का त्याग कर धर्म का वरण करता है अर्थात् ऐहिक सुख से अधिक पारलौकिक सुख को स्वीकार करता है।

(25) जो व्यक्ति अपने पितरों (जीवित माता-पिता, दादा-दादी आदि वृद्धों), नगर और देश के रक्षकों, विद्वानों आदि का श्रद्धापूर्वक अन्न, पान, वस्त्रादि से सत्कार करता है।

(26) जो व्यक्ति चेतनदेव परमेश्वर की उपासना, जड़देव अग्नि, वायु, जलादि का यज्ञ (होम) द्वारा उपकार करता है।

(27) जो सदैव स्नेही तथा हितकारी मित्रों की संगति में रहता है।

(28) जो यथाशक्ति ही कार्य करते हैं, ख्याली पुलाव नहीं बनाते।

(29) जो किसी भी वस्तु, व्यक्ति की अकारण उपेक्षा और तिरस्कार नहीं करते।

(30) जो व्यक्ति किसी के घर अथवा सभा में बिना बुलाये नहीं जाते और बिना पूछे नहीं बोलते हैं।

(31) जो विश्वसनीय व्यक्तियों पर विश्वास करते हैं और अविश्वनीय व्यक्तियों पर विश्वास नहीं करते।

(32) जो दूसरे की बात को धैर्यपूर्वक सुनता है, दूसरे के आशय को शीघ्र समझ लेता है।

(33) जो पराये कार्य में बिना पूछे टांग नहीं अड़ाता है।

(34) जो मनुष्य स्वयं दूषित आचरण नहीं करता और दूसरे के अच्छे आचरण की निन्दा नहीं करता है।

(35) जो समर्थ होते हुए भी अकारण किसी पर क्रोध नहीं करता है।

(36) जो व्यक्ति दुर्लभ पदार्थ की कामना नहीं करते और नष्ट हुई वस्तु के विषय में शोक नहीं करते।

(37) जो आपत्ति आने पर धैर्यपूर्वक उसका सामना करते हैं और बिलकुल घबराते नहीं हैं।

(38) जो व्यक्ति अपनी शक्ति पर विचार कर धर्मानुकूल पुरुषार्थ से ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।

(39) जो व्यक्ति कार्य को प्रारम्भ करके मध्य में न छोड़कर उसे पूरा करके ही दम लेते हैं।

(40) जो व्यक्ति शासन करने के योग्य पर शासन करता है अर्थात् जो आज्ञा को मान सकता है उस पर आज्ञा चलाता है और आज्ञाकारी व्यक्ति को ही अपने निकट रखता है।

(41) जो कृपण व्यक्ति का सेवन नहीं करता।

(42) जो जितेन्द्रिय है और विध्वंसात्मक कार्यों के स्थान पर निर्माणात्मक कार्यों में लगा रहता है।

(43) जो व्यक्ति आर्यों (श्रेष्ठों) के कर्मों में अनुराग रखते हैं, ऐश्वर्य कारक कर्मों को करते हुए कल्याणकारक की कभी निन्दा नहीं करते।

(44) जो अपना सम्मान होने पर फूल कर कुप्पा नहीं हो जाता और अपमान होने पर दु:खी नहीं होता।

(45) जो समुद्र के समान गम्भीर और क्षोभ रहित होता है।

(46) जो मनुष्य सब प्राणियों की क्षणभङ्गुरता अथवा भौतिक पदार्थों की वास्तविकता (विनाशभाव) को जानता है।

(47) जो सब कार्यों के करने की विधि और कार्यसिद्धि के उपायों को जानता है।

(48) जिसकी वाणी कुपित नहीं होती तथा अपनी बात कहने में चतुर है।

(49) जो तर्कणाशक्ति से युक्त है और प्रत्युत्पन्नमति (हाजिर जवाब) है और दूसरे की बात का अभिप्राय शीघ्र समझ और कह सकता है।

(50) जिसकी बुद्धि शास्त्रानुसारिणी है तथा श्रेष्ठ लोगों की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करती।

(51) जो बहुत बड़ी सम्पत्ति, विद्या, राज्य, स्वामित्वादि पाकर भी निरभिमान होकर विचरता है।

विशेष-उपर्युक्त गुणों से युक्त व्यक्ति ही पण्डित कहलाने योग्य है। यहाँ पण्डितों के लक्षणों में हमने मूर्खों के विरोधी गुणों का भी समावेश किया है, इसे अन्यथा न लिया जाये। विदुरनीति में महात्मा विदुर द्वारा राजा धृतराष्ट्र के लिए दिए गए उपदेश हैं। यद्यपि उपर्युक्त नियम साधारण रीति से सभी व्यक्तियों के लिए लाभकारी हैं, तथापि राजनीति में तो परमावश्यक है। जो राजा या जिस राज्य के कर्मचारी ऐसे लक्षण वाले व्यक्ति नहीं होते हैं, वह राजा अथवा राज्य शीघ्र नष्ट हो जाता है।

मूर्खों के लक्षण

36. अश्रुतश्च समुन्नद्धो दरिद्रश्च महामना:।
अर्थाश्चाकर्मणा प्रेप्सुर्मूढ इत्युच्यते बुधै:॥

शब्दार्थ-(अश्रुत:) शास्त्रज्ञानरहित होकर (च) भी (समुन्नद्ध:) अत्यन्त अभिमानी (च) और (दरिद्र:) दरिद्र होकर भी (महामना:) बड़े-बड़े मनोरथों वाला (च) और (अकर्मणा) बिना कर्म किये ही (अर्थान्) धनों को (प्रेप्सु:) चाहने वाला (इति) ऐसे लक्षणों से युक्त व्यक्ति (बुधै:) ज्ञानीजनों के द्वारा (मूढ:) मूर्ख (उच्यते) कहा जाता है।

37. समर्थं य: परित्यज्य परार्थमनुतिष्ठति।
मिथ्या चरति मित्रार्थे यश्च मूढ: स उच्यते॥

शब्दार्थ-(य:) जो (स्वम्) अपने (अर्थम्) कार्य को (परित्यज्य) छोड़कर (परअर्थम्) शत्रु के कार्य को (अनुतिष्ठति) करता है (च) और (मित्रार्थे) मित्र के कार्य में (मिथ्या) झूठा (चरति) व्यवहार करता है, (स:) ऐसा व्यक्ति (मूढ:) मूर्ख (उच्यते) कहा जाता है।

38. अकामान्कामयति य: काम्यमानान्परित्यजेत्।
बलवन्तं च यो द्वेष्टि तमाहुर्मूढचेतसम्॥

क्रमश: अगले अंक में....

धार्मिक कर्मकाण्ड और आर्यसमाज

❑ भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य, B-2, 92/7B, शालीमार नगर, जिला होशियारपुर (पंजाब)

प्रत्येक धर्म में सच्चाई आदि गुणों को व्यवहार में लाने की जहां सदाचार वाली बात होती है, वहां कुछ बातों, कुछ चीजों पर विश्वास लाया जाता है। कुछ विचारों को मान्यता

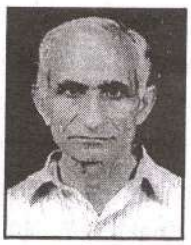

दी जाती है अर्थात् माना जाता है। इसके साथ सभी धर्मों में अपनी तरह का धार्मिक कर्मकाण्ड भी होता है। इस शब्द का अर्थ है-धर्म के रूप में कुछ कर्म करना। जैसे कि अपने धर्मग्रन्थ का विशेष ढंग से पाठ करना। मन्त्र, शब्द विशेष का जाप, स्मरण, ध्यान करना। अपने इष्टदेव की विशेष वस्तुओं से पूजा करना। किसी व्रत को रखना अर्थात् किसी विशेष समय पर विशेष वस्तु ही खाना। किसी निश्चित दिन पर विशेष स्थल पर जाना, वहां स्नान करना।

आर्यसमाज धार्मिक कर्मकाण्ड को सड़क की बोर्डों की तरह प्रेरणा देने वाले, राह बताने वाले के रूप में मानता है। धर्म की असली पहचान सच्चा-सुच्चा, ईमानदार होना ही है। आर्यसमाज की दृष्टि से यदि व्यक्ति सदाचारी नहीं बनता, उसकी ओर ध्यान नहीं देता। तो पूजा-पाठ, व्रत-तीर्थ का अपने आप में कोई लाभ नहीं। अर्थात् यह कर्मकाण्ड हृदय को शुद्ध करने के लिये और सच्चा-सुच्चा होने की प्रेरणा देने के लिए ही होता है। अत: इसकी अपने आप में स्वतन्त्र सत्ता नहीं माननी चाहिए।

आर्यसमाज में धार्मिक कर्मकाण्ड के रूप में ईश्वर भक्ति के लिए ब्रह्मयज्ञ-सन्ध्या का विधान है, जिसमें अनेक वेदमन्त्रों द्वारा ईश्वर के स्वरूप को स्मरण करते हुए प्रभु से जुड़ने का यत्न किया जाता है। ईश्वर सर्वव्यापक और नित्य है, अत: ईश्वर के दर्शन के लिए इधर-उधर जाने की जरूरत नहीं है। परमात्मा अभौतिक रूप में सबके हृदयों में विराजमान है। अत: पूजा के लिए किसी बाहर की चीज की जरूरत नहीं है। अपने मनपसन्द मन्त्र या भजन द्वारा सीधे अपने हृदय से प्रभु से जुड़ने का यत्न करना चाहिए। यही स्मरण-ध्यान का सरल मार्ग है। शुद्ध, निराकार परमात्मा को नहलाना, वस्त्र पहनाना आदि नहीं हो सकता, अत: आर्यसमाज इस प्रक्रिया को नहीं करता। हाँ, उस महान् दाता के उपकारों को स्मरण करते हुए धन्यवाद, कृतज्ञता ज्ञापन के रूप में हमें प्रभु की पूजा करनी चाहिए जिससे हमारे अन्दर आत्मबल, आत्मविश्वास उभरे।

आर्यसमाज ब्रह्मयज्ञ के साथ देवयज्ञ=अग्निहोत्र भी करता है। जिसमें सर्वप्रथम **'एक पन्थ दो काज'** के अनुसार वेदमन्त्रों से ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना होती है। उन वेदमन्त्रों में आता है कि ईश्वर किस प्रकार संसार की एक-एक प्राकृतिक चीज को बना और चला रहा है। फिर अग्नि जलाकर उसमें शुद्ध देशी घी और हवन सामग्री की मन्त्रों के साथ आहुति दी जाती है। जैसे पाकशाला में अग्नि के सम्पर्क के भेद से पकने वाली चीज के स्वाद में अन्तर आ जाता है तभी तो उबली, रेत में भुजी, अंगारों पर सिकी शकरकन्दी, छल्ली (भुट्टा) के स्वाद में कितना अन्तर होता है। ऐसे ही अग्नि अपने में डाले गए सुगन्धित, दुर्गन्धनाशक पदार्थों से वायुमण्डल को दुर्गन्धरहित और सुगन्धित बना देती है। शुद्ध जल-वायु ही रोग दूर कर स्वास्थ्य देती है।

आर्यसमाज जहां हृदय में प्रभु से जुड़ने को भक्ति-पूजा मानता है, वहां हवन द्वारा जल-वायु को शुद्ध करने वाले धार्मिक कर्मकाण्ड को स्वीकार करता है। ये धार्मिक कर्म स्पष्ट और सार्थक हैं। आर्यसमाज ऐसे कर्मकाण्ड को नहीं मानता, जो बाहर स्पष्ट रूप में होने पर भी किसी प्रकार के फल को नहीं देता।

जैसे कहीं सफाई करने पर उसका वहां स्पष्ट प्रभाव सामने आ जाता है। ऐसे ही जिन धार्मिक कर्मों को बाह्यरूप से करने पर फल, प्रभाव स्पष्ट नहीं होता। वे व्रत, तीर्थ आदि अपने परिणाम की दृष्टि से विचारणीय हैं। किसी कर्म की सार्थकता से उसके परिणाम, प्रभाव, लाभ का बोध होता है। जिन कर्मों का अपने मूल उद्देश्य से सीधा सम्बन्ध, तालमेल, कार्य-कारण भाव है, वे ही सार्थक हैं। जैसे बीज को फूलता-फलता करने के लिए गुड़ाई, सिंचाई, संभाल आदि का सीधा सम्बन्ध होता है। ऐसे ही धार्मिक कर्मकाण्ड का अपने मूल उद्देश्य से सीधा सम्बन्ध होना चाहिए। तभी वे सार्थक कहे जा सकते हैं।

इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि आर्यसमाज प्रमाण-तर्कसंगत, व्यावहारिक सच्चाइयों का प्रचार करता

है। इसलिए सभी सत्य [=यथार्थ, छलरहित] व्यवहार चाहने वालों से निवेदन है कि वे आर्यसमाज की बातों पर बिना पक्षपात और पूर्व आग्रह के विचार करके सच्चाई को समझें और उसको अपनाने का यत्न करें।

इसके साथ जीवन में जो-जो बातें बाधक, निरर्थक हैं। आर्यसमाज ऐसे निरर्थक धार्मिक कर्मकाण्ड और कुरीतियों का कभी समर्थन नहीं करता। जैसे कि मृतकश्राद्ध, चौबर्सी, पौधे-वृक्षों पर दिया जलाना, धागे-कपड़े बांधना। इसीलिए आर्यसमाज का आठवां नियम है—**'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।'** यहां **अविद्या**-शब्द=अज्ञान, अन्धविश्वास, उलटे रिवाज, कुरीति, अन्ध-परम्परा, रूढ़िवादिता, गलत बात का प्रतीक है। और **विद्या**-सच्चाई, नीति, अध्यात्म, सही बात, ढंग, सार्थक तत्त्व, व्यावहारिक सिद्धि का वाचक है। हम अपने चारों ओर रोज देखते हैं, कि कहीं भूत-प्रेत, बाधा-डायन घोषणा, अनमेल विवाह, दहेजप्रथा, भ्रूणहत्या का ताण्डव है और कहीं बलिप्रथा से फल की सिद्धि, नशा-जुआ, मौजमस्ती जैसी कुरीतियां पैर जमा रही हैं। ऐसी हानिकारक बातों का आर्यसमाज हर तरह से विरोध करता है। क्योंकि ये बातें वैयक्तिक और सामाजिक जीवन में बाधाएं खड़ी करती हैं। इन सबके दुष्परिणाम आए दिन दैनिक पत्रों में भी छपते रहते हैं। ऐसे ही धार्मिक कर्मकाण्ड के नाम पर हमारे यहां अनेक चीजें चलती हैं, जिनको करने पर भी कोई परिणाम सामने नहीं आता।

यह कितने आश्चर्य की बात है कि आज विद्या और विज्ञान का विकास हो रहा है। फिर भी हम स्पष्ट रूप से निरर्थक रिवाजों में उलझे हुए हैं। बाधक बातों से बार-बार ठोकर खाते हुए भी उन्हीं को करते रहते हैं। उनमें धर्म, भाषा, प्रदेश, जात-बिरादरी और कार्य के नाम पर भेदभाव करना, घृणा-ईर्ष्या-द्वेष फैलाना अनुचित है। इसीलिए सातवें नियम में कहा है-**'सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।'** इस बात पर विश्वास रखने वालों को यह नियम सन्देह देता है कि हमें सभी मनुष्यों को सामान्यत: बिना भेदभाव के प्रीतिपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। हां, पारिवारिक या मित्र सम्बन्ध बनाते हुए धर्मानुसार यथायोग्य वर्ताव करना चाहिए। जब सभी मनुष्यों की एक जाति है तो कल्पित अन्तर्जातीय बात पर तूफान नहीं खड़ा करना चाहिए।

आर्यसमाज के विचारों, नियमों पर हम आर्यों का विश्वास टिकना, दृढ़ होना चाहिए। विश्वास, साख का मूलमन्त्र है-श्रद्धा अर्थात् श्रत्=सत्य का धा=धारण, पालन। यतो हि सत्य को अपनाने पर ही किसी का किसी पर विश्वास जमता, टिकता और रहता है और तभी किसी को सुख, शान्ति, सफलता प्राप्त होती है। अन्यथा वह हर क्षेत्र में भटकता ही रहता है।

स्वास्थ्य-चर्चा...

सेहतमंद रहने के मंत्र

किसी ने सच ही कहा है कि अगर जान है तो जहान है। कोई भी शख्स बीमार नहीं पड़ना चाहता लेकिन सेहत तभी ठीक रहेगी जब हम सेहत से जुड़े कुछ नियमों का पालन करें। एक बात अच्छे से समझ लीजिए कि इलाज करवाने से बेहतर है कि हम सेहत से जुड़ी हर बात के लिए सावधानियां बरतें ताकि हम बीमार न पड़ें। माना कि हम कई बीमारियों से खुद को नहीं बचा पाते लेकिन कुछ जरूरी कदम उठाकर हम अपना स्वास्थ्य ठीक रख सकते हैं। आज हम आपको सेहत से जुड़े छोटे-छोटे टिप्स बताते हैं जिन्हें अपनाकर आप सेहतमंद रह सकते हैं।

- सिर्फ गेहूं के दाने के बराबर चूना, गन्ने के रस में मिलाकर पीने से पीलिया बहुत जल्दी ठीक हो जाती है।
- फ्रिज का ज्यादा ठंडा पानी पीने से बड़ी आंत सूख जाती है इसलिए ठंडा पानी पीने से परहेज करें।
- गर्म पानी के साथ नहाने से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होनी शुरू हो जाती है।
- खड़े होकर पेशाब करने से रीड़ की हड्डी को नुकसान पहुंचता है।
- नीम के पत्ते खाने से खून साफ होता है।
- गेहूं का चोकर खाने से शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
- जलने पर आलू का रस, हल्दी या शहद लगाने से छाले नहीं पड़ते।
- आंखों की खुजली, लाली और जलन दूर करने के लिए पैर के अंगूठे सरसों के तेल में डुबोने से राहत मिलती है।
- चोट, दर्द, फोड़ा, सूजन और घाव होने पर इसके ऊपर चुम्बक बीस मिनट तक रखने से सूजन कम हो जाती है। टूटी हड्डियों का इससे इलाज करने से यह बहुत कम समय में ठीक हो जाती है।
- पेट का दर्द होने पर जीरे को तवे पर भूनकर 2-3 ग्राम पानी के साथ दिन में तीन-चार बार पीने से जल्दी लाभ मिलेगा।
- जोर से छींकने से कानों को नुकसान पहुंचता है।
- बहुत ज्यादा झुक कर किताब पढ़ने से फेफड़ों को नुकसान पहुंचता है।

शेष पृष्ठ 10 पर....

मनुष्य अपने भाग्य का विधाता स्वयं है

यह संसार नरक नहीं है। इसको नरक और स्वर्ग मनुष्य ही बनाता है। यह कर्मभूमि है। तपस्वी लोग यहाँ आकर तप करते हैं, यह देवभूमि है। देवता यहाँ आकर यजन करते हैं। असुर लोग अपने स्वभावानुसार असुर लोक में उपद्रव करते हैं, तो यहां आकर भी उत्पात ही मचाते हैं। परन्तु इस भूमि का यह गुण है कि यहाँ जो जैसा बीज बोता है वह वैसा ही फल पाता है। यह मनुष्य शरीर पुण्य करने के लिए ही प्राप्त हुआ है। मनुष्य स्वयं अपने भाग्य का विधाता है। इस मानव शरीर में बोये हुये बीज का फल काटने के लिए जीवात्मा को चौरासी लाख योनियों में भटकना पड़ता है। मानव ही एक कर्म योनि है, शेष सब तो भोग योनियां हैं। अत: मानव योनि में रहकर जीवात्मा स्वयं अपने हाथों अपने भाग्य का सर्जन करता है।

आज मानव जाति ने धर्म और सम्प्रदाय को एक ही चीज मान लिया है, लेकिन यह अलग-अलग हैं। धर्म मनुष्य मात्र को धारण करने वाली सच्चाइयों या नियमों का नाम है और सम्प्रदाय अनेक हैं। मत-पंथ अनेक हैं, वे मनुष्य समाज को बांटते हैं। राजनीति को स्वच्छ व पवित्र बनाने के लिए धर्म का सहचार आवश्यक है। उसके बिना राजनीति अन्धी है और राजनीति के बिना धर्म लंगड़ा है परन्तु सम्पदाय महाविनाशक और भयावह है। इसलिए राजनीति धर्मसम्मत और पंथ निरपेक्ष होनी चाहिए। धर्म की भांति मनुष्य मात्र की जाति भी एक है। अत: जातिवाद का प्रश्न ही निरर्थक और बेबुनियाद है जबकि वर्णव्यवस्था शुद्ध राष्ट्रीय व्यवस्था होने से परम आवश्यक है।

भगवान् कृष्ण का अमर संदेश है अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्-जो कर्म मैंने किये या कर रहा हूँ, उसका अच्छे कर्म का फल अच्छा और बुरे कर्म का फल बुरा मुझे ही प्राप्त होगा। परमात्मा की इसी अटल न्याय व्यवस्था में कोई पक्षपात या सिफारिश नहीं है। व्यक्ति अपने ही बुरे कर्मों से नरक भोगता है, कोई किसी को स्वर्ग या नरक नहीं देता है। व्यक्ति अपने कर्म से उठता तथा अपने कर्म से ही नीचे गिरता है। परमात्मा की अदालत में कोई वकील, दलील और अपील नहीं चलती है। उसकी वार में आवाज नहीं होती है। प्रेरक कथन हमें सचेत कर रहा है—

कण-कण में बसा प्रभु देख रहा, चाहे पाप करो चाहे पुण्य करो। कोई उसकी नजर से बच न सका।

हम शान्ति चाहते हैं, मगर काम अशान्ति के कर रहे हैं। सुख चाहते हैं परन्तु काम दु:ख के कर रहे हैं। निरोग होना चाहते हैं, परन्तु खान-पान सहन-सहन रोगी बनने के करते हैं। यह दुनिया अपने में बड़ी समझदार है। सब कामों के लिए समय निकाल लेते हैं, परन्तु सत्संग, स्वाध्याय, प्रभुभक्ति, साधना, सेवा आदि के लिए उनके पास समय नहीं है। यदि मजबूरीवश ऐसी जगहों पर जाना पड़े तो वहाँ केवल समय काटने के लिए ही जाते हैं। सत्संग कथा-प्रवचन, यज्ञ आदि जीवन को सुधारते हैं। ये बातें बुराइयों व दोषों को छुड़ाने में ब्रेक का काम करती हैं। इनसे हमें ज्ञान की रोशनी मिलती है। सत्संग में हमें विचार मिलते हैं, विचारों से हृदय बदलता है और ज्ञान प्राप्त होता है। वैदिक सत्संग में आदमी को पता नहीं कि कौन-सा शब्द आदमी की बुराइयों को अच्छाई में बदल सकता है। भक्त अमीचन्द को महर्षि दयानन्द ने कहा था कि अमीचन्द हो तो तुम हीरे परन्तु कीचड़ में पड़े हुए हो। महर्षि के यह शब्द सुनकर अमीचन्द में सुधार आया तो उन्होंने लिखा—

तुम्हारी कृपा से जो आनन्द आया,
वाणी से जाये यह क्योंकर बताया।
तुम्हारी दया से अजी मेरे भगवन्,
मेरी जिन्दगी ने अजब पलटा खाया॥

जो मनुष्य नीचों का संग छोड़कर उत्तम पुरुषों की संगति करते हैं, वे सब व्यवहारों की सिद्ध से ऐश्वर्य वाले होते हैं। जो अनालसी होकर सिद्धि के लिये यत्न करते हैं, वे सुखी और जो आलसी होते हैं, वे दरिद्रता को प्राप्त होते हैं (यजु०)। मनुष्य की सब कामना पूरी करने वाले परमेश्वर की आज्ञापालन करके और अच्छी प्रकार पुरुषार्थ से विद्या का अध्ययन, विज्ञान, शरीर का बल, मन की बुद्धि, कल्याण की सिद्धि तथा उत्तम से उत्तम लक्ष्मी की प्राप्ति सदैव करनी चाहिए तथा व्यवहार और पदार्थों को शुद्ध करना चाहिए (यजु०)।

दु:ख के नाना बोल हैं, सुख के हैं दो बोल।
सच्चा जीवन सादगी, भोजन करे सो तोल॥

शेष पृष्ठ 10 पर....

शिष्य गुरु की आज्ञा में रहें

❑ डॉ० अशोक आर्य, जी. 7, शिप्रा अपार्टमेंट, कौशाम्बी, जिला गाजियाबाद

गुरु और शिष्य का एक पवित्र सम्बन्ध होता है। जब तक शिष्य गुरु की आज्ञा में रहता है, गुरु के आदेशों का पालन करता है, गुरु के आचरण का अनुसरण करता है,

तब तक वह निरन्तर उन्नति पथ पर अग्रसर रहते हुए उच्च शिक्षा प्राप्त करता है, किन्तु ज्यों ही वह उच्छृंखल, विलासी, प्रमादी और अनुशासन रहित होता है, त्यों ही उसकी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। इस तथ्य को वेद ही नहीं स्वीकार करता अपितु वेद के अनुगामी ग्रन्थों ने भी स्वीकार किया है। काठक गृह्यसूत्र भी इस प्रकार के ग्रन्थों में से एक है। इस ग्रन्थ में यही उपदेश देते हुए इस प्रकार कहा गया है—

आचार्यास्याप्रतिकूलः। (काठक गृह्यसूत्र 1.19)

इस सूत्र के अनुसार उपदेश किया गया है कि उत्तम शिक्षा पाने का अभिलाषी शिष्य सदा आचार्य के अनुकूल रहे। आचार्य जिस प्रकार का सोचे, शिष्य वैसा ही करे। आचार्य जैसे व्यवहार की कामना करे, शिष्य वैसा ही व्यवहार करे। आचार्य की शिष्य से जिस प्रकार की उपेक्षाएं हों, शिष्य उन सब उपेक्षाओं पर खरा उतरने का प्रयास सदा करता रहे। जब शिष्य अपने आचार्य के अनुकूल आचरण करेगा तो आचार्य को उस शिष्य के प्रति अत्यधिक अनुराग हो जावेगा और वह सच्चे मन से उसे शिक्षा देगा। इस प्रकार शिष्य को अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सरलता होगी।

सूत्र जो दूसरा उपदेश देता है वह यह कि शिष्य सदा अपने आचार्य का आज्ञाकारी रहे। आचार्य का आदेश कैसा भी हो, शिष्य सदा उसे ईश वचन कहते हुए स्वीकारे। हमारे प्राचीन गुरुकुलों में तो आचार्य की आज्ञा की पूर्ति के लिए शिष्य लोग अपनी जान तक भी देने के लिए तैयार रहते थे। गुरु के मुख से आदेश निकलते ही शिष्य उन आदेशों को पूर्ण करने के लिए जी-जान एक कर देते थे। इस सम्बन्ध में अनेक कथाएं प्रचलित हैं। ऐसी एक कथा का वर्णन करते हैं।

आरुणि नामक एक ब्रह्मचारी एक गुरु के पास शिक्षा प्राप्त कर रहा था। एक दिन इस शिष्य को गुरु ने खलिहानों में पानी लगाने के लिए भेज दिया। आरुणि खेत में पानी छोड़ उसकी निगरानी कर रहा था कि उसने देखा एक ओर से मेड़ टूट रही है और यहाँ से खेत में भरा हुआ पानी निकल रहा है। आरुणि के भरसक प्रयास पर भी वह मेड़ बन्ध नहीं रही थी और पानी का निकलना बन्द न हो रहा था। अन्त में इस पानी को रोकने के लिए वह स्वयं उस टूटे हुए स्थान पर लेट गया और पानी को बहने से रोक लिया। जब बहुत देर तक आरुणि नहीं लौटा तब गुरु को चिन्ता हुई और गुरु स्वयं उसे खोजने के लिए गए। खलिहानों में खोजते हुए गुरु ने देखा कि सर्दी में ठिठुरते हुए आरुणि उस स्थान पर लेटा हुआ था जहाँ से मेड़ टूट चुकी थी। गुरु ने अपने इस आज्ञाकारी शिष्य को उठाकर अपनी छाती से लगा लिया। उसे अपने अंगवस्त्र में लपेट लिया और गुरुकुल को लौटा ले गए।

जब गुरु की आज्ञा का पालन शिष्य इस प्रकार से करता है तो गुरु का सारा स्नेह उस शिष्य पर ही लुट जाता है। प्राचीन काल में तो सब शिष्य ही इस प्रकार के हुए थे। इस कारण ही हमारे इतिहास में सदा विद्वानों का अम्बार लगा हुआ है, जिन्होंने बड़े-बड़े आविष्कार करके देश को ही नहीं पूरे संसार को लाभान्वित किया है। जब गुरु की आज्ञा नहीं मानी जाती तो शिक्षा भी उत्तम नहीं मिलती। इसलिए ही आज भी हम देखते हैं कि स्कूटर कार आदि की मुरम्मत की दुकान पर सिखाने वाले अपने गुरु की आज्ञा का अक्षरशः पालन करते हैं। उन्हें गाली भी दी जाती है तो भी वह हंसते हुए उसे ग्रहण करते हैं और उत्तम मैकेनिक बनते हैं। अतः गुरु के सामने शिष्य सदा आज्ञाकारी रहे इसमें ही भलाई है।

इस सूत्र में जिस तृतीय तथ्य पर प्रकाश डाला गया है, वह यह कि शिष्य सदा विनीत रहते हुए गुरु से शिक्षा प्राप्त करे। हम जानते हैं कि विनीत रहते हुए किसी से कुछ भी प्राप्त किया जा सकता है, जबकि कर्कश वाणी के कारण हमारा पुरुषार्थ भी कुछ नहीं कर पाता। एक शिष्य अत्यन्त पुरुषार्थी है किन्तु बोलता सदा कर्कश है। यहाँ तक कि गुरु के सामने भी वह कर्कश भाषा का ही प्रयोग करता है। इस प्रकार के शिष्य से गुरु सदा दुःखी रहता है। बार-बार के

शिष्य गुरु की आज्ञा में रहें

❑ डॉ० अशोक आर्य, जी. 7, शिप्रा अपार्टमेंट, कौशाम्बी, जिला गाजियाबाद

गुरु और शिष्य का एक पवित्र सम्बन्ध होता है। जब तक शिष्य गुरु की आज्ञा में रहता है, गुरु के आदेशों का पालन करता है, गुरु के आचरण का अनुसरण करता है,

तब तक वह निरन्तर उन्नति पथ पर अग्रसर रहते हुए उच्च शिक्षा प्राप्त करता है, किन्तु ज्यों ही वह उच्छृंखल, विलासी, प्रमादी और अनुशासन रहित होता है, त्यों ही उसकी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। इस तथ्य को वेद ही नहीं स्वीकार करता अपितु वेद के अनुगामी ग्रन्थों ने भी स्वीकार किया है। काठक गृह्यसूत्र भी इस प्रकार के ग्रन्थों में से एक है। इस ग्रन्थ में यही उपदेश देते हुए इस प्रकार कहा गया है—

आचार्यास्याप्रतिकूलः। (काठक गृह्यसूत्र 1.19)

इस सूत्र के अनुसार उपदेश किया गया है कि उत्तम शिक्षा पाने का अभिलाषी शिष्य सदा आचार्य के अनुकूल रहे। आचार्य जिस प्रकार का सोचे, शिष्य वैसा ही करे। आचार्य जैसे व्यवहार की कामना करे, शिष्य वैसा ही व्यवहार करे। आचार्य की शिष्य से जिस प्रकार की उपेक्षाएं हों, शिष्य उन सब उपेक्षाओं पर खरा उतरने का प्रयास सदा करता रहे। जब शिष्य अपने आचार्य के अनुकूल आचरण करेगा तो आचार्य को उस शिष्य के प्रति अत्यधिक अनुराग हो जावेगा और वह सच्चे मन से उसे शिक्षा देगा। इस प्रकार शिष्य को अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सरलता होगी।

सूत्र जो दूसरा उपदेश देता है वह यह कि शिष्य सदा अपने आचार्य का आज्ञाकारी रहे। आचार्य का आदेश कैसा भी हो, शिष्य सदा उसे ईश वचन कहते हुए स्वीकारे। हमारे प्राचीन गुरुकुलों में तो आचार्य की आज्ञा की पूर्ति के लिए शिष्य लोग अपनी जान तक भी देने के लिए तैयार रहते थे। गुरु के मुख से आदेश निकलते ही शिष्य उन आदेशों को पूर्ण करने के लिए जी-जान एक कर देते थे। इस सम्बन्ध में अनेक कथाएं प्रचलित हैं। ऐसी एक कथा का वर्णन करते हैं।

आरुणि नामक एक ब्रह्मचारी एक गुरु के पास शिक्षा प्राप्त कर रहा था। एक दिन इस शिष्य को गुरु ने खलिहानों में पानी लगाने के लिए भेज दिया। आरुणि खेत में पानी छोड़ उसकी निगरानी कर रहा था कि उसने देखा एक ओर से मेड़ टूट रही है और यहाँ से खेत में भरा हुआ पानी निकल रहा है। आरुणि के भरसक प्रयास पर भी वह मेड़ बन्ध नहीं रही थी और पानी का निकलना बन्द न हो रहा था। अन्त में इस पानी को रोकने के लिए वह स्वयं उस टूटे हुए स्थान पर लेट गया और पानी को बहने से रोक लिया। जब बहुत देर तक आरुणि नहीं लौटा तब गुरु को चिन्ता हुई और गुरु स्वयं उसे खोजने के लिए गए। खलिहानों में खोजते हुए गुरु ने देखा कि सर्दी में ठिठुरते हुए आरुणि उस स्थान पर लेटा हुआ था जहाँ से मेड़ टूट चुकी थी। गुरु ने अपने इस आज्ञाकारी शिष्य को उठाकर अपनी छाती से लगा लिया। उसे अपने अंगवस्त्र में लपेट लिया और गुरुकुल को लौटा ले गए।

जब गुरु की आज्ञा का पालन शिष्य इस प्रकार से करता है तो गुरु का सारा स्नेह उस शिष्य पर ही लुट जाता है। प्राचीन काल में तो सब शिष्य ही इस प्रकार के हुए थे। इस कारण ही हमारे इतिहास में सदा विद्वानों का अम्बार लगा हुआ है, जिन्होंने बड़े-बड़े आविष्कार करके देश को ही नहीं पूरे संसार को लाभान्वित किया है। जब गुरु की आज्ञा नहीं मानी जाती तो शिक्षा भी उत्तम नहीं मिलती। इसलिए ही आज भी हम देखते हैं कि स्कूटर कार आदि की मुरम्मत की दुकान पर सिखाने वाले अपने गुरु की आज्ञा का अक्षरशः पालन करते हैं। उन्हें गाली भी दी जाती है तो भी वह हंसते हुए उसे ग्रहण करते हैं और उत्तम मैकेनिक बनते हैं। अतः गुरु के सामने शिष्य सदा आज्ञाकारी रहे इसमें ही भलाई है।

इस सूत्र में जिस तृतीय तथ्य पर प्रकाश डाला गया है, वह यह कि शिष्य सदा विनीत रहते हुए गुरु से शिक्षा प्राप्त करे। हम जानते हैं कि विनीत रहते हुए किसी से कुछ भी प्राप्त किया जा सकता है, जबकि कर्कश वाणी के कारण हमारा पुरुषार्थ भी कुछ नहीं कर पाता। एक शिष्य अत्यन्त पुरुषार्थी है किन्तु बोलता सदा कर्कश है। यहाँ तक कि गुरु के सामने भी वह कर्कश भाषा का ही प्रयोग करता है। इस प्रकार के शिष्य से गुरु सदा दुःखी रहता है। बार-बार के

समझाने पर भी उसी शिष्य अपने व्यवहार को नहीं सुधारता। अंत में तंग आकर गुरु उस शिष्य की ओर से अपनी आंखें मोड़ लेता है। जब वह अपने शिष्य की ओर से आंखें मोड़ लेता है तो वह शिष्य अध:पतन की ओर बढ़ने लगता है। गुरु से कुछ भी प्राप्त करने की अवस्था में नहीं रहता और उसकी उन्नति अवरुद्ध हो जाती है। जब विनय की भावना से बहुत कुछ मिल सकता है तो शिष्य क्यों न विनय की भावना अपने अन्दर पैदा करे। इसलिए शिष्य का विनीत होना उत्तम शिक्षा पाने के लिए आवश्यक होता है।

इस प्रकार काठक गृह्यसूत्र में यह स्पष्ट आदेश दिया गया है कि उत्तम शिक्षा का अभिलाषी शिष्य सदा गुरु के अनुकूल व्यवहार करे। वह सदा गुरु की आज्ञा में रहे और सदा विनीत रहते हुए शिक्षा प्राप्त करे तो वह एक अच्छा विद्वान् बनेगा अन्यथा वह अज्ञान के कुएं में जा गिरेगा। जैसा कि आज अवज्ञाकारी विद्यार्थी कर रहा है, इस कारण ही वह आज पूर्ण शिक्षित नहीं हो पा रहा।

इसलिए आज आवश्यकता है कि आज का विद्यार्थी अनुशासन को समझे और पूर्ण समर्पित भाव से गुरु का, आचार्य का, अध्यापक का अनुसरण करे तथा उसके आदेशों का यथावत् पालन करे।

क्या मैं महत्त्वाकांक्षी होने...पृष्ठ 7 का शेष...

- तुलसी के पत्ते रोजाना चबाने से मलेरिया नहीं होता।
- भोजन पकाने के बाद इसमें नमक डालने से ब्लड प्रेशर बढ़ने की समस्या होती है।
- खड़े होकर पानी पीने से घुटनों में दर्द की शिकायत हो सकती है।
- दूध के साथ नमक वाली चीजें खाने से चमड़ी के रोग हो सकते हैं।
- मुलेठी चूसने से गले में जमा कफ बाहर निकल जाता है और आवाज मधुर हो जाती है।
- गंदा पानी पीने से होने वाले रोगों से राहत पाने के लिए नींबू के रस का सेवन करें।
- सेहत के लिए सेंधा नमक सबसे अच्छा होता है, इसके बाद काला नमक आता है लेकिन सफेद नमक जहर के समान होता है।
- शूगर के रोगी द्वारा जामुन की गुठली का चूर्ण बनाकर एक-एक चम्मच खाना खाने से एक घंटा पहले पानी के साथ लेने से फायदा होता है।

मनुष्य अपने भाग्य का....पृष्ठ 8 का शेष....

दान भजन सत्संग करे, है जीवन का सार।
जीवन उत्तम है वही, जिसमें है उपकार॥
यह है सत्य संसार में, जीवन है दिन चार।
पापकर्म फिर क्यों करें, अब लें सोच-विचार॥
नेकी बदी दो गाड़ियां, रहती सदा तैयार।
मूर्ख चढ़ते बदी पर, नेकी पर होशियार॥

अज्ञान मानव का परम शत्रु है। अज्ञान से उत्पन्न आत्मविश्वास मनुष्य को सत्यपथ से हटाकर असत्य पथ पर ले जाता है। इसका परिणाम सर्वदा दु:ख ही है। आजकल के भ्रष्ट व्यक्तियों को इससे शिक्षा लेनी चाहिए।

लोभ सब पापों की जड़ है। लोभी आदमी भयंकर से भयंकर अपराध कर बैठता है। लोभ का त्याग करो। वे लोग अति दु:खी हैं, जो अविद्या की उपासना करते हैं, परन्तु उससे भी कहीं बढ़कर दु:खी वे हैं, जो विद्या पर गर्व करते हैं। ''मनुष्यों का आचरण दो प्रकार का होता है। एक सत्य तथा दूसरा झूठ का अर्थात् जो पुरुष वाणी, मन और शरीर से सत्य काआचरण करते हैं, वे देवता कहाते और झूठ का आचरण वाले हैं वे असुर राक्षस आदि नामों के अधिकारी होते हैं'' (शतपथ-ब्राह्मण)।

श्रेष्ठकर्म करते हुए जीने की इच्छा भारतीय जीवन दर्शन है। वेद का भी उपदेश है कि हे मनुष्यो! पुरुषार्थी और कर्मशील बनो। कर्मों से मनुष्य देवता बनता है, कर्मों से ही मनुष्य राक्षस बनता है। यह संसार कर्म की खेती है। जो जैसा बोता है, वह वैसा पाता है।

जैसा बीज वैसा फल। जैसी करनी वैसी भरनी।
करनी करें सो फल भरे, करके क्यों पछताय।
बोये पेड़ बबूल के, तो आम महाँ से खाय॥

जीव कर्म करने में स्वतन्त्र, परन्तु फल भोगने में परतन्त्र है। जीव अपने कर्मानुसार जगत् में आता है और उसी के अनुसार फल भोगकर चला जाता है। अकेला आता और अकेला ही चला जाता है। जो इंसान कर्म करता है, उसी के आधार पर जाति, आयु और भोग प्राप्त होते हैं।

जब तक तुम जीते हो सदा सत्य कर्म में ही पुरुषार्थ करते रहो, किन्तु इसमें आलस्य कभी न करो, ईश्वर का यह उपदेश सब मनुष्यों के लिये है।

—सूबेदार करतारसिंह आर्य 'सेवक'
आर्यसमाज गोहाना मण्डी (सोनीपत)

धैर्य

❑ नरेन्द्र आहूजा 'विवेक' 602 जीएच 53 सैक्टर-20, पंचकूला 09467608686

धैर्य धर्म का लक्षण और मनुष्य के जीवन का अत्यन्त आवश्यक गुण है जिसके बिना सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती। धैर्य सबसे बड़ी प्रार्थना है जिसके द्वारा जीवन के लक्ष्य का द्वार खुल जाता है। धैर्य ही लक्ष्य के द्वार की चाबी है। वेद भगवान् ने भी अधीरता और क्रोध को त्यागकर धैर्यवान् सहनशील बनने का आदेश देते हुए कहा-'**अहमस्मि महमानः**' (अथर्व० 12.1.54) अरे मैं तो अत्यन्त धैर्यवान् सहनशील हूँ। अत्यन्त विपरीत या विषम परिस्थितियों में भी सामञ्जस्य बैठाकर समभाव बनाकर मुस्कुराते रहना ही धैर्यवान् होना कहलाता है।

योगेश्वर कृष्ण ने विषाद में फंसे अर्जुन को गीता का ज्ञान देते समय भी योगियों के लिए स्थितप्रज्ञ होकर धैर्यवान् होना एक आवश्यक लक्षण बताया है। जो सुख में इतराये नहीं, विपत्ति में घबराये नहीं और प्रत्येक अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थिति में समभाव बना रहकर उस स्थिति का सामना करे वही धैर्यवान जीवन में सफलता पा सकता है। जो व्यक्ति सुख के समय उसके अभिमान में इतरा गया उसका सुख क्षणिक होता है और यदि विपत्ति के समय घबरा गया तो वह मुसीबत पहाड़ बन जाती है और व्यक्ति उस कष्ट में टूट जाता है। इसीलिए महाराज मनु ने धर्म के लक्षण लिखते समय धैर्य को धर्म का लक्षण बताया और वेद भगवान् ने भी धैर्यवान, सहनशील होने का आदेश दिया।

गुरु वसिष्ठ ने धैर्य का सुन्दर उदाहरण देते हुए कहा-''राज्याभिषेक के लिए बुलाए गए और वन के लिए विदा किए गए मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के मुख के आकार में कोई अंतर नहीं देखा।'' इसे कहते हैं धैर्य। योगेश्वर कृष्ण पर कैसे-कैसे संकट आये, कंस के अत्याचार, जरासंध के प्रहार, शिशुपाल के दुर्वचन परन्तु वह सच्चे योगी की भांति सदैव शान्त भाव से मुस्कुराते रहे। आधुनिक काल में आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द पर ईंट-पत्थर फैंके गए, अनेक बार विष दिया गया, लांछन लगाए गए परन्तु वह सब कुछ सहते हुए अत्यन्त धैर्य के साथ मानव मात्र के कल्याण में लगे रहे।

शायद यही धैर्य ही इन सभी में वह समान गुण था जिसके कारण वह अपने जीवन में अपने लक्ष्य को पाने में सफल रहे और अपने कार्यों विचारों से अमर होकर हम सभी के लिए अनुकरणीय आदर्श स्थापित कर गए।

धैर्यवान सहनशील व्यक्ति के लिए जीवन में कुछ भी असम्भव नहीं ऐसा कहते हुए नीतिशास्त्र में सुंदर वर्णन किया है, ''जिसके हृदय में जल के समान शीतल समुद्र छोटी-सी नदी सा मेरु पर्वत पत्थर के खण्ड समान, सिंह हिरण के समान, सर्प पुष्पों का हार और विष अमृत के समान हो जाता है। शान्त रहने और धैर्य रखने से व्यक्ति हर कठिनाई पर विजय पा सकता है इसीलिए कहा गया अच्छे श्रोता बनो, धैर्य से सुनो, लेकिन करो वही जो तुम्हारा विवेक कहता है। धैर्य सब प्रसन्नताओं व शक्तियों का मूल तत्त्व है। जिसके पास धैर्य संयम सहनशीलता है वह जो इच्छा करे प्राप्त कर सकता है। धैर्य को कमजोरी व मजबूरी समझने वाले मूर्ख होते हैं।

सहनशीलता तो वीरता का गुण है। अधीर जल्दबाज मनुष्य मुंह के बल गिर पड़ते हैं जबकि धैर्यवान सदा लक्ष्य को सफलता पूर्वक प्राप्त करते हैं। संयम धैर्य का रास्ता दर्द से भरा होता है परन्तु उसकी मंजिल सदैव सुखदायी होती है। धैर्य और सन्तुष्टि जीवन नौका की वह पतवारें हैं जो उसे भवसागर के हर भंवर से निकालकर मंजिल तक ले जाती है। विचारों के कारण उपस्थित होने पर भी जिसके मन में विकार उत्पन्न नहीं होते वह धैर्यवान है। धैर्य और मेहनत से वह कुछ पाया जा सकता है जो शक्ति और शीघ्रता से नहीं मिल सकता। इसीलिए हम मनुष्यों को धर्म के लक्षण, वेद के आदेश और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, योगेश्वर श्रीकृष्ण के जीवन से प्रेरणा लेकर धैर्य संयम सहनशीलता को अपने जीवन में धारण करके अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना चाहिए।

योगी हो तो श्रीकृष्ण जैसा

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

ऋषि जी सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में मनु महाराज का यह श्लोक देते हैं-

कामात्मा न प्रशस्ता न चैवेहस्त्यकामता।
काम्यो हि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः॥

अर्थ इस प्रकार किया है-''अत्यन्त कामातुरता और निष्कामता किसी के लिए भी श्रेष्ठ नहीं, क्योंकि जो

कामना न करे तो वेदों का ज्ञान और वेदविहित कर्मादि उत्तम कर्म किसी से न हो सके।'' ज्ञान का ऐसा व्यावहारिक स्वरूप ऋषियों के सिवाय और कौन प्रकट कर सकता है? श्रीकृष्ण जैसे महापुरुषों ने इन्हीं वेदानुकूल शिक्षाओं को आत्मसात् करके संसार का कल्याण किया। आज तो कुछ लोगों को 'मोक्ष' का बहाना बनाते हुए खण्डन-मण्डन के कार्य से बचते हुए आप देख सकते हैं। यहाँ भी ऋषि जी हमारा मार्गदर्शन करते हुए लिखते हैं-''यमों के बिना इन नियमों का सेवन न करें, किन्तु इन दोनों का सेवन किया करें...'' वेद के सन्देश '**कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः**' को ऋषि ने अपने जीवन में जीया। जरासंध के वध के बिना श्रीकृष्ण के लिए राजसूय का औचित्य नहीं था। धर्म की स्थापना के लिए घोर संघर्ष करते हुए भी गृहस्थ के कर्त्तव्यों को निभाया। महाविदुषी पृथिवी नामक देवी से विनम्रता से '**पञ्चमहायज्ञ**' का उपदेश सुनकर गृहस्थ धर्मों का विधिवत् पालन किया। वेदविहित स्वकर्म करते हुए ही तो मनुष्य परम गति पाता है। अतः अपने-अपने आश्रमों के कर्त्तव्य सब निभाएं तो न समाज में और न ही किसी संगठन में कलह रहे। ईश्वरभक्ति, समाज का उपकार तो सबके कर्त्तव्य हैं। श्रीकृष्ण ने '**सन्ध्या**' के नियम का भी दृढ़ता से पालन किया। स्वामी श्रद्धानन्द, धर्मवीर लेखराम, पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी ईश्वर के बड़े उपासक थे। खण्डन मण्डन रूपी धर्म को इनसे बढ़कर और कौन निभा सकता है?

श्रीराम और श्रीकृष्ण के सच्चे व्यक्तित्व को समाज के सम्मुख रखकर आर्यसमाज सम्पूर्ण जगत् का बहुत बड़ा उपकार करता है। पाखण्ड से समाज की बड़ी हानि होती है, अतः आर्यसमाज उसका खण्डन करता है। 'ब्रह्मचर्य' योग के लिए आवश्यक है। पाखण्डी लोग श्रीकृष्ण के चरित्र से ब्रह्मचर्य को तो बिल्कुल अलग ही रख देते हैं। मनु महाराज ने ब्रह्मचारी के लिए नाचना, गाना, बजाना निषेध किया है। मनु के नामलेवा ही श्रीकृष्ण को राधा व गोपियों के साथ रास रचाते चित्रित कर रहे हैं। आर्यसमाज ही मनु का सच्चा श्रद्धालु है। आर्यसमाज अपनाओ। मन्दिरों में पान आदि सामग्री रखकर रात को वहाँ श्रीकृष्ण व राधा के रास रचाने के दावे किये जा रहे हैं। इससे अधिक पतनक्या होगा? देवी रुक्मिणी श्रीकृष्ण की पत्नी थी। अतः उनके साथ राधा का नाम जोड़ना स्त्री जाति का अपमान है। श्रीकृष्ण महावीर थे। ऋषि जी 1857 के अत्याचारों का स्मरण करके तड़प उठते हैं और 'सत्यार्थप्रकाश' में घोषणा करते हैं कि ''श्रीकृष्ण के सदृश कोई होता तो इनके (=अंग्रेजों के) धुर्रे उड़ा देता और ये भागते फिरते।''

अंग्रेजों के समय ऐसी अनेक साहसिक बातें लिखने और कहने का इतिहास ऋषि जी का है। श्रीकृष्ण के वास्तविक चरित्र को प्रकट करके ही कल्याण हो सकता है। सभा कार्यालय अधीक्षक श्री शेरसिंह जी की प्रेरणा पर इस विषय पर लिखा।

आवश्यक सूचना

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक के सभी ग्राहकों को सूचित किया जाता है कि जिन ग्राहकों का जो भी बकाया शुल्क बनता है, वह बकाया शुल्क सभा कार्यालय में जमा करें या मनीऑर्डर द्वारा भेजने का कष्ट करें ताकि हम आपकी पत्रिका समय पर भेजते रहें। शुल्क भेजते समय आप ग्राहक संख्या व मोबाइल नंबर अवश्य लिखें।

—रघुवरदत्त, पत्रिका लिपिक, मो० 7206865945

नैतिकता का उदय

वैदिक धर्म में सदाचार और नैतिकता का बड़ा महत्त्व है। अन्त:करण में धर्म, सदाचार और नैतिकता की स्थापना तभी सम्भव है जब हम वेद की मर्यादाओं का कठोरता से आचरण करते हुए निष्पाप और पवित्र रहकर प्रतिदिन, प्रतिपल और प्रतिक्षण प्रभु की आज्ञा में उपस्थित रहें। प्रभु तो हमें सत्य मार्ग की प्रेरणा करता है और असत् कर्मों से रोकता है। हम प्रभु की उस प्रेरणा को नहीं सुनते। यदि प्रभु से मिलने वाली प्रेरणा का पालन किया जाए और इन्द्रियों का सदुपयोग किया जाए तो मनुष्य निरन्तर जीवन के मधुर इस को चखता हुआ जीवन के परमलक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। यही मानव जीवन की सच्ची नैतिकता है।

नैतिकता की परिधि बहुत विस्तृत है। सनातन वेद सृष्टि के सब मनुष्यों का नैतिक धर्म है। नैतिकता की कसौटी है कि हमारा प्रत्येक कर्म सार्वदेशिक, सार्वभौम, सार्वकालिक और सार्वत्रिक हो। उसका किसी देश, काल या भूमि विशेष से सम्बन्ध न हो। नैतिकता का अभिप्राय है प्राकृतिक पदार्थों का उपभोग करते हुए परमात्मा तक पहुँचना। सत्य बोलना, सेवा करना, परोपकार करना, सब काम धर्मानुसार करना, ये सब मानव जीवन के श्रेष्ठकर्म हैं। इन कर्मों से मनुष्य का उत्तम जीवन बनता है। परोपकार से मनुष्य जीवन की शोभा और महिमा बढ़ती है। सदाचार उन कर्मों को कहते हैं जिन्हें करने से व्यक्ति की अन्तरात्मा को परितोष हो, प्रसन्नता एवं उत्साह की अनुभूति हो। शरीर, वचन और मन से संयमित आचरण करने वाला ही सदाचारी कहलाता है। इसके विपरीत जिस कर्म करने में लज्जा, ग्लानि, भय और शंका की अनुभूति हो उसे दुराचार कहते हैं।

नैतिकता का हेतु मनुष्य को अपने व्यापक स्वभाव का ज्ञान कराना है। नैतिकता अपने आपको वैयक्तिक जीवन से ऊँचा उठाने का साधन है। सत्य, सौन्दर्य और माधुर्य का उदय मनुष्य के मन से होता है पर वह यह नहीं जानता। सारी नैतिकता इस एक शब्द 'मनुष्यता' में आ जाती है। जननेन्द्रिय का संयम तो सबसे महत्त्वपूर्ण है। इस सार तत्त्व से ही शरीर में ओजस, चेहरे पर चमक, वाणी में सौन्दर्य एवं माधुर्य, आँखों में ज्योति, मस्तिष्क में मेधा और स्वभाव में साहस का प्रवाह होता है। वेद के इन दिव्य गुणों पर आचरण करने से समाज में इस वायुमण्डल के तैयार होने पर वही दृश्य उपस्थित हो जाएगा, जिसकी झांकी ऋषि वाल्मीकि ने रामायण में अयोध्या का वर्णन करते हुए की है।

-जगरूपसिंह छिक्कार, स्पेज परिवी सेक्टर-72 बी-103 फ्लोवर-10, गुरुग्राम-122001 (हरयाणा)

राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब

आर्यावर्त के युवक-युवतियो, आगे कदम बढ़ाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥

भीष्म, द्रोण, अर्जुन जैसे थे, आर्यावर्त में वीर सुनो।
चन्द्रगुप्त पौरू विक्रम से, योद्धा थे रणधीर सुनो।
महाबली प्रताप, शिवा, नाना बन्दा हम्मीर सुनो।
अत्याचारी दुष्टों की, छाती देते थे चीर सुनो।
तेगबहादुर गोविन्दसिंह की, वीर कथाएं गाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥ 1॥

पृथ्वीराज जयचन्द लड़े थे, बहुत बुरा था काम हुआ।
जयचन्द ने गौरी बुलवाया, यहाँ घोर संग्राम हुआ।
लाखों वीरों विद्वानों का, जिसमें काम तमाम हुआ।
ललनाओं की लाज लुटी थी, आर्यावर्त गुलाम हुआ।
पढ़ो सभी इतिहास पुराना, भारी लाभ उठाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥ 2॥

जगद्गुरु ऋषि दयानन्द ने, वेदों का प्रचार किया।
तांत्या टोपे तुलाराम मंगल पाण्डेय पर प्यार किया।
पंडित नन्दकिशोर गौड को, लड़ने को तैयार किया।
कुंवरसिंह और नाहरसिंह की, ताकत का विस्तार किया।
लक्ष्मीबाई की कुर्बानी, दुनिया को समझाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥ 3॥

स्वामी श्रद्धानन्द, लाजपत, विपिनचन्द्र से नेता थे।
तिलक, गोखले, नौरोजी, आजादी के प्रचेता थे।
बालमुकुन्द और सोहनलाल पाठक वेदों के वेत्ता थे।
ऊधमसिंह, बिस्मिल, शेखर, भारत के वीर विजेता थे।
नेता वीर सुभाष बनो अब, भगत सिंह बन जाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥ 4॥

वीरों के बलिदानों से, प्यारा भारत आजाद हुआ।
थोड़े दिन के लिए भारती, जनता का दिलशाद हुआ।
चले गए अंग्रेज यहाँ से, काले गोरे छोड़ गए।
भारत की भोली जनता की, गर्दन दुष्ट मरोड़ गए।
जाति-पाति का रोग बढ़ाया, जागो! रोग मिटाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥ 5॥

धूर्त स्वार्थी नेताओं को, देश धर्म से प्यार नहीं।
पुण्य-पाप का भले-बुरे का, करते मूढ विचार नहीं।
दुष्ट विधर्मी गद्दारों को, अपने सिर पर चढ़ा रहे।
कुर्सी के भूखे हैं पापी, यहां शराबी बढ़ा रहे।
'नन्दलाल' निर्भय मिलकर, गुण्डों से देश बचाओ तुम।
राम-कृष्ण-हनुमान बनो अब, वैदिक धर्म निभाओ तुम॥ 6॥

—पं० नन्दलाल निर्भय पत्रकार, भजनोपदेशक मो० 9813845774

स्वाध्याय एवं यज्ञ से जीवन की उन्नति व सुखों की प्राप्ति होती है

❑ मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

परमात्मा ने मनुष्य की जीवात्मा को मानव शरीर किसी विशेष प्रयोजन से दिया है। पहला कारण हमें अपना अपना

मानव शरीर व मानव जीवन अपने पूर्वजन्मों के कर्मों के आधार पर आत्मा की उन्नति व दुःखों की निवृत्ति के लिये मिला है। आत्मा की उन्नति के लिये जीवन में ज्ञान की प्राप्ति व उसके अनुरूप आचरण का सर्वोपरि महत्व है। ज्ञान प्राप्ति बुद्धि का विषय है। परमात्मा ने बुद्धि इसी प्रयोजन को पूरा करने के लिये दी है। बुद्धि ज्ञान प्राप्ति में सहायक है। ज्ञान की प्राप्ति माता, पिता, आचार्यों के उपदेशों सहित वेद व ऋषियों के वेदानुकूल ग्रन्थों के स्वाध्याय व अध्ययन से होती है। यदि मनुष्य धार्मिक माता, पिता व आचार्यों को प्राप्त न हो और वेद व वैदिक साहित्य का स्वाध्याय न करे तो उसके ज्ञान में वृद्धि, आचरण की शुद्धि और जीवन के उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति कदापि नहीं हो सकती। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ही स्वाध्याय, ईश्वरोपासना तथा देवयज्ञ अग्निहोत्र का महत्त्व है। हमारे शास्त्रकारों ने विधान किया है कि मनुष्य को स्वाध्याय से कभी प्रमाद नहीं करना चाहिये। जो मनुष्य वा स्त्री-पुरुष स्वाध्याय करेगा व करते हैं, वह ज्ञान प्राप्ति कर उन्नति करते हुए सुखों को प्राप्त होते हैं। इसके देश व समाज में अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। मनुष्य की आर्थिक उन्नति बिना सद्ज्ञान प्राप्ति के अधूरी होती है। कई बार यह विनाशकारी भी हो जाती है। बहुत बड़े बड़े धनाढ्य लोग जेलों में जाते देखे जाते हैं। इसका कारण उनके जीवन का स्वाध्याय व आचरण से शुद्ध न होना ही होता है। यदि उनका ज्ञान व आचरण शुद्ध होता तो उनकी अपयश आदि से दुर्दशा न होती। आजकल की शिक्षा में सद्ज्ञान व विद्या का वह समावेश नहीं है जो कि उसमें होना चाहिये। जिस शिक्षा में वेद सम्मिलित न हों, वह शिक्षा अधूरी है और इससे मनुष्य का चरित्र निर्माण नहीं होता। वेदों का ज्ञान व वैदिक शिक्षा मनुष्य का चरित्र निर्माण करती है। वह मनुष्य को आस्तिक, ईश्वर का उपासक, देश व समाज का भक्त व हितैषी, धार्मिक व परोपकारी बनाती है। अतः सभी मनुष्य स्कूलों में न सही, अपने घरों में रहकर तो वेदों पर आधारित तथा वेदज्ञान की कुंजी हिन्दी व देश की अनेक भाषाओं में उपलब्ध, ऋषि दयानन्द के अमर ग्रन्थ ''सत्यार्थप्रकाश'' का अध्ययन तो अवश्य ही कर सकते हैं। इससे मनुष्य का अज्ञान व अविद्या दूर होकर ज्ञान के चक्षु खुल जाते हैं और अध्येता को सत्यासत्य का पूरा परिचय होने के साथ धर्म व अधर्म, धर्म व मत-मतान्तरों का अन्तर तथा अच्छे व बुरे लोगों की पहचान हो जाती है। अतः सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ का पढ़ना अज्ञान दूर करने तथा ज्ञानी बनकर देश व समाज के लिये कुछ विशेय कार्य करने की प्रेरणा ग्रहण करने के लिये आवश्यक एवं हितकर है।

हमारे देश में स्वाध्याय करने तथा विद्वानों द्वारा अविद्वानों को प्रवचन की परम्परा उतना ही पुरानी है जितनी की हमारी यह सृष्टि है। यही कारण था कि प्राचीन भारत अज्ञान व अविद्या से रहित था। हमारे देश में बड़ी संख्या में ऋषि होते थे जो तत्त्ववेत्ता तथा ईश्वर का साक्षात्कार किये हुए धर्म की दृष्टि से महानपुरुष होते थे। इनके द्वारा शिक्षित बालक व युवा इन्हीं के बताये मार्ग पर चलकर स्वजीवन का कल्याण करने सहित देश व समाज का उपकार करते थे। शास्त्रों में स्वाध्याय प्रतिदिन करने का विधान है। स्वाध्याय से मनुष्य को अपनी आत्मा व जीवन का ज्ञान होता है और इसके साथ ही वह ईश्वर का सत्यस्वरूप, ईश्वर की उपासना की आवश्यकता क्यों व उसकी विधि से भी परिचित हो जाता है। निरन्तर स्वाध्याय, ध्यान व चिन्तन से मनुष्य का ज्ञान बढ़ता जाता है जिससे वह अपने आचरणों को सुधार कर अपने परिवार व समाज के लोगों का मार्गदर्शन भी करता है। मनुष्य व देश-समाज की उन्नति के लिये ही ऋषि दयानन्द व आर्यसमाज के विद्वानों ने लोगों को स्वाध्याय की प्रेरणा करने के साथ अनेक विषयों के सद्ग्रन्थों का निर्माण किया जिसका अध्ययन मनुष्य को अज्ञान को दूर करने में सहायक होता है। यह अनुभव की बात है कि जो ज्ञान वेद व वैदिक साहित्य में उपलब्ध है, वह ज्ञान संसार के इतर ग्रन्थों में कहीं प्राप्त नहीं होता। ईश्वर व आत्मा विषयक सद्ज्ञान तो वेद, उपनिषद, दर्शन तथा सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में ही उपलब्ध होता है। अतः सभी मनुष्यों को अपनी आत्मिक, शारीरिक तथा सामाजिक उन्नति के लिये इन ग्रन्थों सहित समस्त वैदिक साहित्य का अध्ययन करने में प्रवृत्त होना चाहिये। यदि हम प्रतिदिन एक दो घण्टे

पढ़ने की आदत डाल लें तो हम कुछ ही महीनों व वर्षों में अपने जीवन को ज्ञान व साधना की दृष्टि से बहुत ऊंचा उठा सकते हैं।

स्वाध्याय करते हुए मनुष्य को ईश्वर व आत्मा सहित इस संसार के सत्यस्वरूप का ज्ञान हो जाता है। उसे ईश्वर की उपासना सहित वायु, जल व पर्यावरण की शुद्धि के लिये यज्ञ करने की प्रेरणा भी मिलती है। सन्ध्या, यज्ञ तथा सदाचार मनुष्य जीवन के आवश्यक कर्तव्य हैं। इन कर्तव्यों के पालन से मनुष्य के जीवन की उन्नति होती है। ज्ञान व सद्कर्मों से मनुष्य का सांसारिक जीवन सुधरता है तथा पारलौकिक जीवन भी उन्नत बनता व सुधरता है। अग्निहोत्र यज्ञ वेद व ऋषियों का एक ऐसा आविष्कार है जिसकों करने से मनुष्य न केवल वायु व वर्षा जल की शुद्धि करता है अपितु अग्निहोत्र करने से उत्तम रीति से ईश्वर की उपासना सहित ईश्वर की स्तुति तथा प्रार्थना भी हो जाती है। इससे मनुष्य का मन व आत्मा सबल होते हैं। रोग दूर होते हैं तथा मनुष्य स्वस्थ एवं दीर्घायुष्य को प्राप्त होता है। मनुष्य का ज्ञान बढ़ता जाता है तथा यज्ञ करते हुए विद्वानों की संगति होने से उसे अनेक प्रकार के ज्ञान व मार्गदर्शन प्राप्त होते हैं जो जीवन में अत्यन्त लाभकारी होते हैं। जीवन में सत्संगति का महत्त्व निर्विवाद है। जो मनुष्य सत्संगति नहीं करता उसका सज्जन पुरुषों की संगति के अभाव में जीवन बर्बाद हो जाता है। यदि हम सत्संगति नहीं करेंगे तो कुसंगति स्वत: होकर हमें हानि पहुंचा सकती है। वेद व वैदिक साहित्य से सत्संगति होने से इन ग्रन्थों के प्रणेताओं से संगति हो जाती है जिसका लाभ स्वाध्याय करने वाले तथा यज्ञ करने वाले मनुष्यों को जीवन में ही नहीं अपितु परजन्मों में भी मिलता है।

हम उदाहरण के रूप में देखते हैं कि हमारे देश के महापुरुष स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, महात्मा हंसराज, महाशय राजपाल जी, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती के जीवन का कल्याण ऋषि दयानन्द के दर्शन वा उनके अनुयायियों की संगति सहित ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश आदि के अध्ययन से ही हुआ था। माता-पिताओं को अपनी सन्तानों को ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र पढ़ाना व सुनाना चाहिये तथा उनके साहित्य को पढ़ने की प्रेरणा भी करनी चाहिये। इससे निश्चय ही माता-पिता व बच्चे सभी लाभान्वित होंगे और देश को भी चरित्रवान् व आस्तिक युवा सन्तानें मिलेंगी। ऐसा करने से देश में कुछ संगठनों द्वारा हमारी धर्म व संस्कृति के विरुद्ध दूषित विचारों का प्रचार करने वाले लोगों से हमारी सन्ताने बच सकेंगी।

जीवन निर्माण विषयक जितना महत्त्वपूर्ण साहित्य हम आर्यसमाज में उपलब्ध देखते हैं उतना अन्यत्र दुर्लभ है। आर्यसमाज में एक सहस्र से भी अधिक स्वाध्याय योग्य ग्रन्थ हैं जिनमें से हम प्रमुख ग्रन्थों का अध्ययन कर कालान्तर में अन्य ग्रन्थों को भी पढ़ सकते हैं। ऋषि दयानन्द और आर्य विद्वानों ने वेदों के भाष्य भी रचे हैं। इसके साथ ही उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति, रामायण एवं महाभारत ग्रन्थ भी साधारण हिन्दी भाषा में उपलब्ध हैं। सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थ तो ऋषि दयानन्द ने हिन्दी भाषा में ही लिखे हैं। ऋषि दयानन्द जी के जीवन पर अनेक विद्वानों द्वारा लिखे छोटे व बड़े जीवन चरित्र भी उपलब्ध हैं। हमें इन सभी ग्रन्थों का अध्ययन करने का सुअवसर मिला है। इन्हें पढ़कर न केवल हममें ज्ञान की उन्नति व वृद्धि होगी अपितु इनके अध्ययन से अविद्या दूर होगी और आत्मा में सुख व प्रसन्नता की अनुभूति भी होती है। जीवन आध्यात्मिक एवं सांसारिक दोनों ही दृष्टियों से उन्नति करता है। अग्निहोत्र यज्ञ करने से भी जन्म-जन्मान्तर में लाभ व उन्नति होती है। अत: उन्नति के इच्छुक सभी मनुष्यों को प्रतिदिन स्वाध्याय व दैनिक यज्ञ करने का व्रत लेना चाहिये। इससे निश्चय ही जीवन का कल्याण होगा।

आर्यजगत् के लिये दु:खद सूचना

बहुत ही दु:ख के साथ सूचित किया जाता है कि आर्यजगत् के उच्चकोटि के विद्वान् पंडित कमलेश कुमार अग्निहोत्री जी का आज 25 जुलाई 2020 को अहमदाबाद में आकस्मिक निधन हो गया है। स्मरण रहे कि पिछले वर्ष नवंबर 2019 के ऋषि मेले पर आपको आर्यजगत के श्रेष्ठ विद्वान् के रूप में सम्मानित किया गया था। ऐसे महामानव के निधन पर परोपकारिणी सभा अजमेर राजस्थान हार्दिक दु:ख व्यक्त करते हुए परमपिता परमेश्वर से दिवंगत आत्मा की सद्गति की प्रार्थना करती है।

डॉ. वेदपाल **कन्हैयालाल आर्य**
प्रधान **मन्त्री**
परोपकारिणी सभा अजमेर, राजस्थान

आर्य कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय कालका (पंचकूला) का 10वीं व 12वीं का परीक्षा परिणाम सत्र 2019-20

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक द्वारा संचालित आर्य कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय कालका जिला पंचकूला का दसवीं कक्षा का हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड का परिणाम 82.1 प्रतिशत रहा। विद्यालय की मेधावी छात्रा अंकिता 92.6 प्रतिशत अंक प्राप्त कर प्रथम स्थान पर रही। अनु सैनी 89.6 प्रतिशत के साथ द्वितीय स्थान पर तथा मधु 87.8 प्रतिशत अंकों के साथ तृतीय स्थान पर रही। विद्यालय की 35 छात्राओं ने परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

इसी तरह हरियाणा शिक्षा बोर्ड 12वीं कक्षा की वार्षिक परीक्षा में विद्यालय की छात्राओं ने शानदार प्रदर्शन किया है। बता दें कि आर्य स्कूल का आर्ट्स एवं कॉमर्स संकाय में परीक्षा परिणाम 100 प्रतिशत रहा। आर्ट्स संकाय में नेहा कुमारी 80 प्रतिशत अंकों के साथ प्रथम स्थान पर रही। वहीं खुशबू व अनीता ने 79 प्रतिशत अंकों के साथ दूसरा एवं पूजा ने 78 प्रतिशत अंकों के साथ तीसरा स्थान प्राप्त किया। कॉमर्स संकाय में सलोनी 75.4 प्रतिशत अंक हासिल कर पहले पायदान पर, रीतिका 72.6 प्रतिशत अंकों के साथ दूसरे व लवलीन 69.2 प्रतिशत अंकों के साथ तीसरे पायदान पर रही।

सभाप्रधान मा० रामपाल आर्य व सभामन्त्री श्री उमेदसिंह शर्मा ने सफलतम परीक्षा परिणाम के लिए शिक्षक वर्ग व स्कूल की कार्यकारिणी को बधाई एवं शुभकामनाएँ दीं तथा उम्मीद की गई कि शिक्षक वर्ग भविष्य में भी इसी प्रकार मेहनत करता रहेगा। होनहार छात्राओं को भी बधाई दी गई।

छोटा विज्ञापन बड़ा लाभ

'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक समाचार पत्र में विज्ञापन देकर लाभ उठायें।

आर्य कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय (वीर भवन) पानीपत का कक्षा 10वीं तथा 12वीं का परीक्षा परिणाम सत्र 2019-20

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक द्वारा संचालित आर्य कन्या वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय (वीर भवन) पानीपत का दसवीं तथा बारहवीं कक्षा का हरियाणा विद्यालय शिक्षा बोर्ड का परिणाम निम्न प्रकार रहा—

बारहवीं का परीक्षा परिणाम-परीक्षा में उपस्थित विद्यार्थी-64, मैरिट-30, प्रथम श्रेणी-63, द्वितीय श्रेणी-00

दसवीं का परीक्षा परिणाम-परीक्षा में उपस्थित विद्यार्थी-74, मैरिट-17, प्रथम श्रेणी-63, द्वितीय श्रेणी-04

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा की तरफ से शानदार परीक्षा परिणाम के लिए विद्यालय की सभी अध्यापिकाओं, प्रबन्ध समिति एवं छात्राओं को हार्दिक बधाई।

—सभामन्त्री

प्रेरक वचन

- सकारात्मक सद्गुणों का अभ्यास ही नियम कहलाता है।
- आदर्श मनुष्य वही है जो संकट के समय धैर्य और साहस से काम ले।
- बाधा जितनी बड़ी होती है, विजय भी उतनी ही बड़ी होती है।
- आत्ममुग्धता पतन की पहली सीढ़ी है।
- उचित योजना के अभाव में कोई भी प्रयोजन पूर्ण नहीं होता।
- आत्म-विश्लेषण सुधार की दिशा में पहला कदम होता है।
- जो आप आज और अभी कर रहे हैं, उसे सर्वश्रेष्ठ करें।
- संकल्प से ही लक्ष्य संभव होता है।
- प्रेम हर बोझ को हल्का बना देता है।
- किसी भी कार्य की शुरुआत उसका सबसे मुश्किल पड़ाव होती है।
- चरित्र सबसे बड़ा धन है जिसकी सावधानी पूर्वक रक्षा की जानी चाहिए।
- एक हार के बाद जीवन समाप्त नहीं हो जाता।

संकलन—भलेराम आर्य गांव-सांघी (रोहतक)

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा

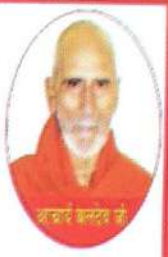

कोरोना को हराना है देश को जिताना है

- लॉकडाउन और सोशल डिस्टेंसिंग की लक्ष्मण रेखा का पालन करें।
- घर के बुजुर्गों का रखें ख्याल
- देश के कोरोना योद्धाओं का सम्मान करें।
- मॉस्क लगाये, अपना जीवन सुरक्षित करें।
- रोजाना हवन करें और पर्यावरण को शुद्ध करें।
- अपने घर व आसपास में सैनेटाइज करें।

निवेदक :- आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्द मठ रोहतक

श्री .....

पता .....

.....

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा